Original Article
ISSN (Online): 2582-7472

ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts
February 2024 5(2), 541–546

ETHNIC IDENTITY AND ELECTORAL POLITICS IN BIHAR: FROM INDEPENDENCE TO MANDAL'S POLITICS

बिहार में जातीय पहचान और चुनावी राजनीति: स्वतंत्रता से लेकर मंडल पूर्व की राजनीति तक

Pramod Kumar [1], Sanjeev Kumar [1], Dipika Sharma [1]

[1] Assistant Professor, University of Delhi

Corresponding Author
Dipika Sharma,
dr.dipika1982@gmail.com

DOI
10.29121/shodhkosh.v5.i2.2024.2613

Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.

Copyright: © 2024 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License.

With the license CC-BY, authors retain the copyright, allowing anyone to download, reuse, re-print, modify, distribute, and/or copy their contribution. The work must be properly attributed to its author.

ABSTRACT

English: This research paper examines the dynamics of caste and identity politics from the era of post -independence in Bihar. This highlights the continuous role of caste in the socio-political changes and electoral behavior brought by the leaders of the backward caste and the historical development of caste-based political mobilization. This paper investigates major political movements and developments such as the rise of the Janata Dal and the establishment of the Mandal Commission report and their influence on the political scenario of Bihar. In the end the paper states that the politics of development oriented governance and caste -based identity dominates the political field of Bihar.

Hindi: यह शोध पत्र बिहार में स्वतंत्रता के बाद के युग से मंडल पूर्व तक जाति और पहचान की राजनीति की गतिशीलता की पड़ताल करता है। यह जाति आधारित राजनीतिक लामबंदी के ऐतिहासिक विकास पिछड़ी जाति के नेताओं द्वारा लाए गए सामाजिक-राजनीतिक परिवर्तनों और चुनावी व्यवहार को आकार देने में जाति की लगातार भूमिका पर प्रकाश डालता है। इस पेपर में प्रमुख राजनीतिक आंदोलनों और घटनाक्रमों की जांच की गई है जैसे कि जनता दल का उदय और मंडल आयोग की रिपोर्ट की स्थापनाए और बिहार के राजनीतिक परिदृश्य पर उनके प्रभाव। अंत में पेपर बताता है कि विकासोन्मुखी शासन और जाति आधारित पहचान की राजनीति बिहार के राजनीतिक क्षेत्र में हावी है।

Keywords: Caste, Bihar, Politics, Identity, Electoral Behavior, जाति, बिहार, राजनीति, पहचान, चुनावी व्यवहार

1. प्रस्तावना

भारतीय समाज ने कर्म आधारित वर्ण व्यवस्था से लेकर जन्म आधारित जातीय व्यवस्था के संक्रमणकाल से अब तक जातीय अस्मिता एवं पहचान के विकास क्रम में जातीय द्वन्द को झेला है| जाति व्यवस्था अपने मूल में पादसोपानीय, कठोर, अपरिवर्तनीय, शोषनकारी एवं भेदभावकारी सिद्धांत पर आधारित है| जन्म से निर्धारित होने वाली इस व्यवस्था ने भारतीय समाज को विखंडित किया तो वही दूसरी ओर लोकतांत्रिक व्यवस्था ने राजनीति एवं चुनाव को भी गहराई से प्रभावित किया| भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में मतदाताओ के चुनावी व्यवहार को प्रभावित करने मे जाति सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारक के रूप में उभरती रही है| बिहार में भी जाति चुनावी राजनीति का एक अभिन्न हिस्सा रही है जिसने दशकों से राज्य की राजनीतिक गतिशीलता को आकार दिया है। जबकि आजादी के बाद के भारत में चुनावी राजनीति अधिक प्रासंगिक हो गई। औपनिवेशिक काल के दौरान जाति

How to cite this article (APA): Kumar, P., Kumar, S., and Sharma, D. (2024). Ethnic Identity and Electoral Politics in Bihar: From Independence to Mandal's Politics. *ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts, 5*(2), 541–546. doi: 10.29121/shodhkosh.v5.i2.2024.2613

आधारित राजनीति ने पहले से ही चुनावी परिदृश्य को प्रभावित करना शुरू कर दिया था । बी.आर. अंबेडकर जैसे नेताओं ने हाशिए और वंचित जातियों के लिए राजनीतिक प्रतिनिधित्व के महत्व को पहचाना और चुनावी राजनीति में निचली जातियों की भागीदारी की नींव रखी।

2. स्वतंत्रता प्राप्ति की पृष्टभूमि में जातीय पहचान

स्वतंत्र भारत के बाद चुनावी राजनीति बहुत प्रासंगिक और लोकप्रिय हो गई। पूर्व स्वतंत्र भारत के दौरान चुनावी राजनीति ज्यादातर कुलीन वर्गों और प्रमुख जाति के नेताओं के लिए महत्वपूर्ण चिंता का विषय थी। अंबेडकर ने वास्तव में निचली जातियों से आने वाले लोगों को प्रोत्साहित किया था और संस्थानों का गठन किया था ताकि वे चुनावी राजनीति में भाग ले सकें। अम्बेडकर ने महसूस किया था कि हाशिए और वंचित जातियों के चुनावी और राजनीतिक प्रतिनिधित्व के बिना एक वास्तविक और सच्चा लोकतंत्र संभव नहीं है। इसके अलावा अम्बेडकर राजनीतिक लोकतंत्र की स्थापना से पहले सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना करने की आकांक्षा रखते थे। उन्होंने कहा कि वंचित लोगों का इस्तेमाल हमेशा उच्च जातियों और सुविधा प्राप्त समुदायों द्वारा चुनावी सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक लाभ के लिए किया गया है। उन्होंने कहा इस देश की आजादी के बाद और सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार हासिल करने के बाद दलित या सीमांत लोग जो लगभग 80 प्रतिशत आबादी का गठन करते हैं चुनावी राजनीति में अपरिहार्य हो गए। इस प्रकार देश की स्वतंत्रता के बाद से जाति चुनावी राजनीति में एक प्रमुख उपकरण बन गई।[1] अम्बेडकर ज्यादातर महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश के क्षेत्र में हाशिए और वंचित जातियों के बीच सांस्कृतिक एकता के बारे में जागरूकता पैदा करने में सफल रहे लेकिन भारत के उत्तरी राज्यों में इसी तरह की जागरूकता गायब थी।[2] इस संदर्भ में दो प्रमुख बिंदु महत्वपूर्ण हो गए। सबसे पहले जाति व्यवस्था से लड़ने के लिए दलित पैंथर आंदोलन ने सभी स्तरों पर जाति व्यवस्था को उजागर किया। दूसरे, बिहार और उत्तर प्रदेश में राम मनोहर लोहिया और कांशीराम के उदय ने राजनीतिक स्तर पर दलितों और ओबीसी को लामबंद करके जाति-विरोधी राजनीति की नींव रखी। इस प्रकार बिहार ने चुनावी क्षेत्र में ओबीसी का एक बड़ा उभार देखा और हाशिए की जातियों को काफी हद तक लामबंद किया।

3. काँग्रेस प्रभुत्व का प्रारंभिक दौर एवं बिहार में जातीय पहचान-राजनीति

1967 और 1990 के बीच की अवधि में बिहार में महत्वपूर्ण राजनीतिक उथल-पुथल देखी गई। जिसमें जाति आधारित लामबंदी ने गति पकड़ी। जुंजी (1974) ने दावा किया कि बिहार 1967 से 1975 के आपातकाल तक तीव्र राजनीतिक उथल-पुथल से गुजरा। कृषि संबंधों में बदलाव ने देखा कि 1960 के दशक की शुरुआत तक अगड़ी जातियों द्वारा पारंपरिक भूमि के स्वामित्व में ढील मिलनी शुरू हो गई थी। बल्कि इसने नए भूमि-स्वामी वर्ग की क्षमता में वृद्धि की। जिसमें मुख्य रूप से उच्च ओबीसी (यादव, कोइरी, कुर्मी) शामिल थे। जो बदलाव की आवश्यकता को स्पष्ट करते थे और परिवर्तन के एजेंट बन जाते थे। 1968 तक इन पिछड़ी जातियों के एकीकरण ने उन्हें उन परिस्थितियों के खिलाफ रोने में सक्षम बनाया जो उन्हें उभरते सामाजिक-आर्थिक अवसरों से वंचित करती थीं।

आगे श्री नागेश झा ने कहा कि अब वे राजनीतिक सत्ता में अपने हिस्से के लिए तैयार थे। दूसरी ओर कांग्रेस पर हावी रहने वाली अगड़ी जातियां सत्ता में हिस्सेदारी के विचार से सहज नहीं दिखीं। पिछड़ी जातियों के लिए सार्वजनिक रोजगार में आरक्षण की मांग की समाजवादी रणनीति ने इन जातियों को 'पिछड़ों' की छतरी के नीचे लामबंद करने को और गति दी। निचले ओबीसी और एससी अपेक्षाकृत कमजोर स्थिति में थे क्योंकि वे बड़े पैमाने पर भूमिहीन थे और अधिकांश किरायेदारों पर निर्भर थे जो तत्कालीन जमींदारों के साथ-साथ नए यादव भूमि मालिकों पर निर्भर थे। जबकि सत्ता के लिए संघर्ष भूमि के मालिक उच्च जातियों और यादवों के नए भूमि मालिक वर्ग; उनके पास ठाकुर सेनाए भूमिहार सेना और यादव सेना हैद्ध के बीच था। ये निम्न ओबीसी और बीसी का विरोध करने के लिए एक साथ इकट्ठा हुए थे (झा: 1970 पृ. 341,343-344)।

1967 के विधानसभा चुनावों के बाद जन सिंह कम्युनिस्टों और संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी (एसएसपी) सहित विपक्षी दलों ने संयुक्त विधायक दल (एस. वी. डी) नामक एक महागठबंधन बनाया और एस. वी. डी से एक पूर्व कांग्रेसी महामाया प्रसाद सिन्हा ने बिहार के पहले गैर-कांग्रेसी सीएम के रूप में शपथ ली। जिसमें कर्पूरी ठाकुर उनके डिप्टी सी.एम थे। कांग्रेस से अलग होने के बाद चौधरी चरण सिंह सक्रिय हो गए और किसान राजनीति के साथ काम किया जो बाद में ओबीसी की लामबंदी में एक प्रमुख कारक बन गया। बिहार में सिन्हा के नेतृत्व में एस. वी. डी सरकार ज्यादा दिन नहीं चली और सतीश प्रसाद सिन्हा गठबंधन में गुटबाजी का इस्तेमाल कर महज 3 दिन के लिए सीएम बने। हालांकि उन्हें एक अन्य पूर्व कांग्रेसी और तत्कालीन एसवीडी मंत्री बिंदेश्वरी प्रसाद मंडल ने उखाड़ फेंका। मंडल ने निचली जाति के 40 विधायकों के साथ मिलकर शोषित दल (एसडी) का गठन किया।

कुछ हफ्तों के भीतर कांग्रेस के पूर्व सीएम बिनोदानंद झा ने दलित विधायकों के एक समूह के साथ कांग्रेस को विभाजित करके लोकतांत्रिक कांग्रेस दल (एलटीसी) बनाया । उन्होंने भोला पासवान शास्त्री को बिहार का पहला दलित मुख्यमंत्री नियुक्त किया। लेकिन शास्त्री जी में भी अतीत की तरह अस्थिर सरकार थी और मुख्यमंत्री बनने के बाद 100 दिनों से भी कम समय में राज्यपाल शासन घोषित कर दिया गया। 1969 के विधानसभा

[1] https://en.wikipedia.org/wiki/Dalit 28 सितंबर 2018 को एक्सेस किया गया

[2] https://www.nationalheraldindia.com/book-extract/ambedkars-idea-of-separate-electorate-for-dalits-raja-sekhar-vundru 28 सितंबर 2018 को एक्सेस किया गया

चुनाव में भी त्रिशंकु विधानसभा रही। हरिहर प्रसाद सिंह पहले ओबीसी मुख्यमंत्री बने लेकिन उनकी सरकार 4 महीने से भी कम समय तक चली। उनके स्थान पर भोला पासवान शास्त्री ने फिर से सरकार बनाई लेकिन दूसरों की तरह उनकी सरकार भी 2 सप्ताह से भी कम समय में गिर गई। बिहार फिर से राष्ट्रपति शासन के अधीन आ गया। 1970 में कांग्रेस ने घोषणा की कि दारोगा प्रसाद राय मुख्यमंत्री बनेंगे। हालांकि कांग्रेस पार्टी में अगड़ी जाति का गुट शक्तिशाली और वरिष्ठ कांग्रेसी ललित नारायण मिश्रा के पीछे खड़ा हो गया। मिश्रा ने राय को अगड़ी जाति के सीएम के पक्ष में हटाने की पैरवी की। लेकिन दुर्गा प्रसाद राय के इस्तीफे के बाद सभी विपक्षी दल एक साथ आ गए और इस तरह कर्पूरी ठाकुर पहली बार सीएम बने। गठबंधन के भीतर समीकरण फिर बदले और 6 महीने के भीतर तीसरी बार भोला पासवान शास्त्री सीएम बने। लेकिन शास्त्री जी की सरकार भी 6 महीने के भीतर गिर गई जिससे राज्यपाल शासन का मार्ग प्रशस्त हुआ। पिछड़ी जातियों का एकीकरण पूरी तरह से संकुचित नहीं था। लेकिन राजनीतिक उतार-चढ़ाव ने संकेत दिया कि पिछड़ी जातियां वास्तव में राज्य का नेतृत्व कर सकती हैं और अगड़ी जातियों के आधिपत्य को खत्म किया जा सकता है। बिहार में राजनीतिक परिवर्तन की विभिन्न लहरों ने कांग्रेस शासन को असहज क्षेत्र में डाल दिया। केंद्र के भ्रम को राज्यपाल शासन के लगातार कार्यान्वयन और कांग्रेस के मुख्यमंत्रियों के लगातार परिवर्तन में सबसे अच्छा परिलक्षित किया जा सकता है।

काचरू के अनुसार 1960 के दशक के उत्तरार्ध में राजनीतिक अस्थिरता ने कांग्रेस के पक्ष में राजनीतिक संतुलन को स्थानांतरित कर दिया। 1972 में हुए विधानसभा चुनाव में केदार पांडे के नेतृत्व में कांग्रेस की सत्ता में वापसी हुई। बहरहाल कांग्रेस अब 'छाता संगठन' के साथ 'कैच-ऑल' पार्टी नहीं थी। जयप्रकाश नारायण (जेपी) के नेतृत्व में अब कांग्रेस विरोध जोर पकड़ रहा था। ऐतिहासिक रूप से जेपी आंदोलन ओबीसी लामबंदी की प्रक्रिया के लिए महत्वपूर्ण रहा है। पिछड़ी जातियों को एक 'छतरी संगठन' के तहत संगठित करने का यह पहला समेकित प्रयास था। हालांकि आपातकाल के दौरान आंदोलन की घेराबंदी की गई थी और अधिकांश नेता या तो जेल में थे या भूमिगत थे। जेपी ने आंदोलन को अगड़ी जाति विरोधी के रूप में नहीं देखा। उन्होंने आगे कहा कि जबकि जेपी आंदोलन ने पिछड़ी जाति की आकांक्षाओं को दिशा दी। लेकिन इसने वैचारिक रूप से उस क्षण को समाहित नहीं किया। जैसे ही 1977 में आपातकाल हटाया गया और चुनाव हुएए चुनावों में कांग्रेस का सफाया हो गया और जनता पार्टी ने हिंदी हार्टलैंड की सभी संसदीय सीटों पर कब्जा कर लिया। उसने बिहार सहित सभी हिंदी राज्यों में विधानसभा चुनाव भी जीते। कर्पूरी ठाकुर बिहार के सीएम बने। बिहार विधानसभा में अगड़ी जातियों के प्रतिनिधित्व में उल्लेखनीय गिरावट आई थी। सामान्य सीटों से चुने गए विधायकों और अगड़ी जाति के विधायकों का अनुपात 1967 में 55.1 प्रतिशत से घटकर 1977 में 48.6 प्रतिशत हो गया। दूसरी ओर पिछड़ी जातियों का अनुपात 34.5 प्रतिशत से बढ़कर 38 हो गया। हालांकि बिहार विधानसभा में अभी भी ऊंची जातियों का दबदबा बना हुआ है। फिर भी यह घटना इस मायने में काफी महत्वपूर्ण थी कि पिछड़ी जातियां चुनावी सत्ता की राजनीति में अपनी पैठ बना रही थीं।

4. 1970 के दशक की राजनीतिक उथल-पुथल एवं बिहार के जातीय समीकरण

नंद किशोर शर्मा ने कहा कि अगड़ी जातियों के भीतर विधायकों की जातिगत संरचना पर करीब से नजर डालने से पता चलता है कि यह मूल रूप से ब्राह्मणों का नुकसान हुआ है। अन्यथा भूमिहार राजपूत और कायस्थ जैसी अन्य अगड़ी जातियों को पहले के चुनाव की तुलना में थोड़ा फायदा हुआ । ब्राह्मणों के पतन का एक कारण यह है कि जगन्नाथ मिश्रा आपातकाल के दौरान बिहार के मुख्यमंत्री थे और मतदाताओं ने कुछ अर्थों में आपातकाल के तहत की गई ज्यादतियों के लिए आम तौर पर ब्राह्मणों को जिम्मेदार ठहराया (ब्लेयर, 1980)। ब्राह्मणों का नुकसान यादवों और कोइरियों का लाभ था। वास्तव में 1977 तक यादव विधानसभा में दूसरा सबसे बड़ा समूह बन गया था।

पुष्पेंद्र ने कहा कि पिछड़ी जातियों मुख्य रूप से उच्च पिछड़ों की राजनीतिक वृद्धि को मंत्रिमंडल में उनकी बढ़ती हिस्सेदारी के रूप में देखा जा सकता है। कर्पूरी ठाकुर के मंत्रिमंडल में लगभग 42 (38 ऊपरी पिछड़ा + 4 निचले पिछड़े) मंत्री थे जबकि 29 अगड़ी जातियों से संबंधित थे। आजादी के बाद ऐसा पहली बार हुआ कि पिछड़ी जातियों के मंत्रियों की संख्या अगड़ी जातियों से आने वालों से ज्यादा थी। जबकि जनता पार्टी के विधायकों में 40 प्रतिशत अगड़ी जातियों के मंत्री थे। यह 'जो पार्टी को नियंत्रित करता है वह अपने भीतर सत्ता समीकरण को नियंत्रित करता है' का एक उत्कृष्ट उदाहरण था। जाहिर है राज्य में जनता पार्टी कर्पूरी ठाकुर और राम सुंदर दास जैसे पिछड़ी जाति के नेताओं की कमान में थी। इससे पता चलता है कि उच्च जातियों का वजन बहुत अधिक नहीं होना चाहिए।

सिंह ने कहा कि जनता पार्टी सरकार के सामने कई मुद्दे और चुनौतियां हैं। भूमि सुधार स्पष्ट रूप से सरकार के सामने सबसे कठिन चुनौती थी। हालांकि सरकार ने मुंगेरी लाल की अध्यक्षता में तैयार की गई विवादास्पद पिछड़ा वर्ग आयोग की रिपोर्ट को लागू करने का विकल्प चुना । सरकार के इस फैसले का अगड़ी जातियों ने कड़ा विरोध किया। पूरे प्रशासन को ठप कर दिया गया। राज्य दंगों की स्थिति में था। व्यापक हिंसा ने राज्य को बाधित कर दिया था। उन्होंने आगे लिखा कि कर्पूरी सरकार और आरक्षण नीति के तहत सत्ता ढांचे में हिस्सेदारी से नाखुश अगड़ी जाति के विधायकों ने कर्पूरी ठाकुर के खिलाफ लामबंद होना शुरू कर दिया और आखिरकार राम सुंदर दास ने दो साल से भी कम समय में ठाकुर की जगह ले ली । इसके साथ जनता पार्टी के भीतर राजनीतिक घटनाक्रम भी जुड़ गया। पार्टी के भीतर गहरी दरार के परिणामस्वरूप केंद्र में गैर-कांग्रेसी सरकार गिर गई. फ्रेंकल के अनुसार यह राज्य सरकारों के पतन के तुरंत बाद हुआ जहां उन्होंने भी अपने प्रभुत्व का प्रयोग किया । बिहार में कर्पूरी ठाकुर के नेतृत्व वाले लोकदल में 1980 के अंत में नए चुनाव बुलाए गए और चुनाव अभियान के दौरान उन्हें पिछड़े वर्गों को एक में जोड़ना बेहद मुश्किल लगा। पिछड़ी जातियों के नेताओं ने सत्ता पर अपना दावा किया और एक समूह के रूप में पिछड़ों की ताकत पर इसके प्रभाव की परवाह किए बिना एक.दूसरे के खिलाफ प्रतिस्पर्धा की (फ्रेंकेल, 1989)।

हौसर ने कहा कि लोक दल को भी सड़कें बनाने में मुश्किल हो रही थी क्योंकि दलित मतदाता न केवल राज्य भर में बिखरे हुए थे। बल्कि बड़ी संख्या में उपजातियों में विभाजित थे और जमींदारों के साथ संरक्षक-ग्राहक संबंधों में उलझे हुए थे। दूसरी ओर कांग्रेस ने 20 सूत्री कार्यक्रम के तहत भूमिहीनों को मिलने वाले लाभों का जिक्र किया और उन्हें दलितों पर उच्च पिछड़े वर्गों द्वारा किए जा रहे अत्याचारों की याद दिलाई। साथ ही लोकदल मुसलमानों को प्रभावित नहीं कर सका। मुसलमानों को अभी तक अपनी बेहतरी के लिए लोकदल से जुड़ना बाकी था। आदिवासी इलाकों में झारखंड मुक्ति मोर्चा ने लोकदल को आदिवासी मतदाताओं में पैठ नहीं बनाने दी। इस सब ने कर्पूरी ठाकुर के नेतृत्व वाले लोकदल की संभावना पर नकारात्मक प्रभाव डाला और अंततः कांग्रेस की सत्ता में वापसी हुई और जगन्नाथ मिश्रा दूसरी बार बिहार के मुख्यमंत्री बने।

केंद्र में जनता सरकार थोड़े समय के लिए टिकी रही। हालांकि एक बहुत ही महत्वपूर्ण निर्णय जो उसने दिया और जिसने बाद में देश भर में राजनीति के भाग्य को बदल दिया, वह था मंडल आयोग की स्थापना। शर्मा ने कहा कि 1979 में केंद्र में मोरारजी देसाई की सरकार ने शैक्षणिक और सामाजिक स्तर की जांच करने के लिए आयोग की स्थापना की थी। जिसे अब पिछड़ा वर्ग कहा जाता था। इसका नेतृत्व बिहार के पूर्व सीएम बिंदेश्वरी प्रसाद मंडल ने किया था। 1980 में मंडल आयोग की रिपोर्ट जारी की गई और इसने नौकरियों और शैक्षणिक संस्थानों में ओबीसी के लिए मजबूत सकारात्मक कार्रवाई और आरक्षण की सिफारिश की। प्रत्येक राज्य के पास ओबीसी की अपनी सूची होनी थी। 1980 के दशक के दौरानए इस रिपोर्ट ने अकादमिक और राजनीतिक हलकों और बड़े पैमाने पर आम जनता में गहन बहस को आकर्षित किया। हालांकि आयोग की सिफारिशों को लागू नहीं किया जा सका। लेकिन मंडल आयोग की रिपोर्ट ने पहले ही अपना काम कर दिया था यानी जाति चेतना को तीव्र बनाना और जातियों के राजनीतिकरण को और गहरा करना।

5. मंडल-कमंडल की पृष्टभूमि में परिवर्तित होते बिहार जातीय समीकरण

1980 के दशक में सत्ता में रहते हुए कांग्रेस को दो समस्याओं का सामना करना पड़ा। एक जिस तरह का जन समर्थन उसे मिला रहा था कांग्रेस धीरे.धीरे उसे खो रही थी। साहा ने कहा कि 1980 के दशक के अंत में भागलपुर में सांप्रदायिक दंगों के बाद इसने मुसलमानों का विश्वास खो दिया। राजनीतिक क्षितिज पर मंडल-मस्जिद के उभरते प्रकरण ने कांग्रेस के समर्थन आधार को और कमजोर कर दिया। जहां एक तरफ अगड़ी जातियों के मतदाताओं ने भाजपा जैसी अन्य पार्टियों की ओर देखना शुरू कर दियाए जो अगड़ी जातियों के हित को स्पष्ट करती प्रतीत होती हैं। वहीं दूसरी ओर मुस्लिम ओबीसी और दलितों का गठबंधन निकट भविष्य में था। दूसरे कांग्रेस के भीतर ही गुटबाजी अपने चरम पर पहुंच गई है। सिन्हा ने कहा कि इसके परिणामस्वरूपए मुख्यमंत्रियों ने एक के बाद एक एक दूसरे को बदल दिया। बिहार के पूर्व मुख्यमंत्री सतेंद्र नारायण सिन्हा का विवरण इंगित करता है कि जाति से परे गोत्र भी कांग्रेस के भीतर एक विभाजनकारी चर बन गया। जगन्नाथ मिश्रा द्वारा मैथिली ब्राह्मण गुट का नेतृत्व करने की कहानियां अक्सर बिंदेश्वरी दुबे के कन्याकूब ब्राह्मण गुट के साथ संघर्ष में होती हैं (सिन्हा, 1996)। 1985 में जगन्नाथ मिश्रा गुट ने चंद्रशेखर सिंह के खिलाफ दुबे का समर्थन किया।

एक राजपूत जिन्होंने 1983 में मिश्रा की जगह सीएम के रूप में पदभार संभाला था। हालांकि 1987 में मिश्रा ने दुबे के खिलाफ मैथिली ब्राह्मण भगवद झा आजाद का पक्ष लिया। जो 1988 में सीएम बने। 1980 के दशक के दौरान यह सब राजनीतिक घटनाक्रम कांग्रेस के पूर्ण पतन और एक नए सामाजिक-राजनीतिक गठन के उद्भव का संकेत था। जो कांग्रेस के साथ-साथ राज्य में सत्ता के मौजूदा सेट को बदलने वाला था (फ्रेंकेल, 1989)।

ए.के माथुर ने कहा कि विकास के मोर्चे पर 1980 के दशक में रोजगार संरचना में प्रतिगमन, कृषि क्षेत्र में ठहराव कई कृषि आधारित उद्योगों के बंद होने, बेरोजगारी में वृद्धि आदि देखी गई । रोजगार में कृषि का हिस्सा 1981 में 81.5 प्रतिशत से बढ़कर 1991 में 82.3 प्रतिशत हो गया। द्वितीयक क्षेत्र में तेज गिरावट देखने को मिली। यह 1981 में 71 प्रतिशत से घटकर 1991 में 46 प्रतिशत हो गया। 1960-61 में बिहार की प्रति व्यक्ति आय राष्ट्रीय औसत की दो-तिहाई थी। लेकिन 1980 के दशक में घटकर आधे से भी कम रह गई (माथुर, 1994)। उन्होंने आगे कहा कि 1960 के दशक में बिहार में खाद्यान्न उत्पादन की वृद्धि दर राष्ट्रीय औसत से अधिक थी। बिहार में यह 3.05 प्रतिशत थी जबकि पूरे भारत के लिए यह 2.5 प्रतिशत थी। 1980-83, 1990-93 के दौरान खाद्यान्न उत्पादन की चक्रवृद्धि वृद्धि दर 2.3 प्रतिशत तक गिर गई। संक्षेप में, दूसरा चरण (1967-1989) पूर्ववर्ती चरण की तुलना में राजनीतिक अस्थिरता का दौर था। इसने सामाजिक-राजनीतिक लामबंदी और राजनीतिक शक्ति की रूपरेखा में बदलाव के साथ बढ़ती जाति चेतना की अंतर्धाराओं का संकेत दिया। कांग्रेस पार्टी कमजोर दिखाई दी क्योंकि उच्च जातियों ने आजादी के बाद पहली बार मामलों की कमान संभाली थी। चुनावों की हार के बाद कांग्रेस पार्टी के भीतर नेतृत्व में स्थिरता और अपने पारंपरिक समर्थन आधार को मजबूत करने के लिए विकास के एजेंडे पर ध्यान केंद्रित कर सकती थी लेकिन यह दोनों मोर्चों पर विफल रही। विपक्षी दलों के बीच एकता की कमी के कारण कांग्रेस 1980 के दशक में सत्ता में बने रहने में कामयाब रही।

संक्षेप में कहें तो बिहार में आजादी से लेकर मंडल पूर्व के दौर में जातिगत गतिशीलता और चुनावी राजनीति में जटिल बदलाव देखे गए। कांग्रेस पार्टी के लंबे समय से चले आ रहे प्रभुत्व के बावजूद पिछड़ी जाति के नेताओं के बढ़ते प्रभाव जैसा कि कर्पूरी ठाकुर के उदय में देखा गया। जिसने एक राजनीतिक परिवर्तन की नींव रखी, जिसकी परिणति अंततः मंडल युग में हुई। जबकि स्वतंत्रता के बाद के प्रारंभिक वर्षों में उच्च जातियों ने आर्थिक और राजनीतिक शक्ति पर नियंत्रण बनाए रखा। विभिन्न आंदोलनों और नीतिगत बदलावों से प्रेरित ओबीसी के बीच बढ़ती सामाजिक-राजनीतिक जागरूकता ने इस आधिपत्य को बाधित कर दिया। खंडित गठबंधनों का उदय और 1967-1989 के दौरान राज्य सरकारों के लगातार टर्नओवर ने न केवल राजनीतिक अस्थिरता को प्रतिबिंबित किया बल्कि एक नए सामाजिक-राजनीतिक विन्यास की ओर बदलाव का संकेत भी दिया। 1979 में मंडल

आयोग की स्थापना पिछड़ी जातियों के दावे में एक महत्वपूर्ण क्षण का प्रतीक थी। जो केवल प्रतिनिधित्व से ठोस सामाजिक-आर्थिक उत्थान की मांगों में बदलाव का प्रतीक था। आंतरिक विभाजन और स्थायी गठबंधन बनाने में चुनौतियों के बावजूद पिछड़ी जातियों के क्रमिक उत्थान ने बिहार में राजनीतिक परिदृश्य को फिर से परिभाषित किया जिसने मंडल के बाद के युग में अधिक क्रांतिकारी परिवर्तनों के लिए मंच तैयार किया।

6. निष्कर्ष

बिहार में आजादी से लेकर मंडल से पहले के दौर तक जाति आधारित पहचान की राजनीति का जो विकास हुआ है वह चुनावी व्यवहार और राजनीतिक समीकरणों के निर्धारक के रूप में जाति की लगातार भूमिका को उजागर करता है। उच्च जातियों का प्रभुत्व, जिसे शुरू में भूमि और राजनीतिक कार्यालयों पर नियंत्रण के माध्यम से बनाए रखा गया था, को सामाजिक न्याय और राजनीतिक शक्ति की मांग करने वाले उभरते पिछड़ी जाति समूहों से बढ़ती चुनौतियों का सामना करना पड़ा। राजनीतिक प्रवाह की इस अवधि ने जो नेतृत्व में लगातार बदलाव और बदलते गठबंधनों द्वारा चिह्नित है जाति लामबंदी की गहरी अंतर्धाराओं को रेखांकित किया। मंडल आयोग की सिफारिशों के कार्यान्वयन की ओर ले जाने वाली घटनाओं से सामाजिक-आर्थिक कारकों, नीतिगत पहलों और राजनीतिक आकांक्षाओं की परस्पर क्रिया का पता चलता है जिसने बिहार के परिवर्तन को प्रेरित किया।

जबकि जाति बिहार के राजनीतिक परिदृश्य में एक केंद्रीय कारक रही है। यह अंतर्निहित तनावों और संघर्षों के बावजूद, ऐतिहासिक रूप से हाशिए पर रहने वाले समुदायों को सशक्त बनाने का एक साधन भी रही है। राजनीतिक अस्थिरता और जाति आधारित लामबंदी के माध्यम से राज्य की यात्रा सामाजिक परिवर्तन के व्यापक राष्ट्रीय रुझानों को दर्शाती है। जहां समान प्रतिनिधित्व और नीति समावेश के लिए संघर्ष लोकतांत्रिक राजनीति का एक महत्वपूर्ण पहलू बना हुआ है। मंडल से पहले के युग ने बाद के घटनाक्रमों के लिए आधार तैयार किया। इस विचार को मजबूत किया कि बिहार मेंए भारत में अन्य जगहों की तरह जाति की राजनीति केवल पहचान के बारे में नहीं है। बल्कि सामाजिक-आर्थिक सशक्तिकरण और राजनीतिक वैधता के लिए एक व्यापक खोज है। आगे बढ़ते हुए चुनौती शासन के साथ जातिगत विचारों को संतुलित करने में निहित है जो समाज के सभी वर्गों की विकासात्मक आकांक्षाओं को संबोधित करता है।

CONFLICT OF INTERESTS

None.

ACKNOWLEDGMENTS

None.

REFERENCES

Ahmed Sarrour. 2010. Nitish's victory casts (E) in a different mould. Retrieved from: http://twocircles.net/2010nov27/nitish%E2%80%99svictory_castedifferentmould.html#. VYvcfRuqqko.

Alam Sanjir. 2014. Modi Wave or the End of the Politics of Social Justice. Punjab University Research Journal Social Science 22 (2), 192-200.

Blair, H. W., 1980. 'Rising Kulaks and Backward Classes in Bihar' Economic and Political Weekly Vol.

Frankel, F., 1989. Caste, Land and Dominance in Bihar in Frankel and Rao (eds) Dominance and State Power in Modern India: The Collapse of a Social Order, Princeton University Press, Princeton.

Gupta, Shaibal. 2001. 'New Panchayats and Subaltern Resurgence' Economic and Political Weekly Vol 36A No 29A, pp-2742.2744, 17 November 2015, http://www.epw.in/commentary/bihar-new-panchayats-and-subaltern-resurgence.html

Hauser, W., 1997. The General Elections in Bihar 1996: Politics Administrative Atrophy and Anarchy, Economic and Political Weekly Vol.

Jagannath, R., 2013. Why a BJP-JDU Split Will Be Good for India. Firstpost. Retrieved from http://www.firstpost.com/politics/why-a-bjp-jdu-split-will-begood- for-india-867775.html.

Januzzi, F.T. 1974. Agrarian Crisis in India: The Case of Bihar, Sangam Books New Delhi.

Jha Manish K and Pushpendra. 2012. Governing Caste and Managing Conflict Bihar 1990-2011 Kolkata. Mahanirban Calcutta Research Group. Retrieved from: http://www.mcrg.ac.in/PP48.pdf.

Jha, Shri Nagesh 1970, Caste in Bihar Politics, Economic and Political Weekly Vol. 1.

Kumar, Sanjay 1999. New Phase of Backward Caste Politics in Bihar: Janata Dal on Decline, Economic and Political Weekly, Vol. 34A No. 34-35.

Kumar, Sanjay. 2014. BJP forges a new social coalition in Bihar. Economic and Political Weekly 44 (39): 95-98.

Kumar Sanjay. Coalition Politics in Bihar. E Sreedharan (Coalition Politics in India: Selected Issues at Centre and State) pp. 173(208). New Delhi Academic Foundation.